बनारस की जीवन्त परम्परा : गुलाब-बाड़ी

डॉ. भानुशंकर मेहता*

श्रीमान्,'गुलाब' इस देश का मूल वासी नहीं है। यह शायद यवनों के साथ फारस (ईरान) से आया। आज भी वहाँ गुलाब के विशाल उद्यान हैं जहाँ शताधिक किस्म के गुलाब खिलते हैं। वे इसकी सुगन्ध का उपयोग भी जानते थे। आज भी दमिश्क के गुलाब का इत्र मशहूर है। भारत में जहाँगीर के राज्य में साम्राज्ञी नूरजहां को श्रेय दिया जाता है कि उसने गुलाब जल, गुलाब इत्र या रूह ए गुलाब ईजाद किया। 'बाड़ी' का अर्थ है वाटिका या उद्यान, घर को भी बाड़ी कहते हैं-दीवान ए खास कहते हैं।

हम बनारस में सात दिन में नौ त्यौहार मनाते हैं और जब चैत्र में एक विशेष जाति का गुलाब, चैती गुलाब उपजा तो उसे लेकर चैत्र नववर्ष का स्वागत करके हमने गुलाब-बाड़ी मनानी शुरू की। यह चैती गुलाब फैजाबाद (जहाँ आज भी 'गुलाब बाड़ी' नामक भवन है), गाजीपुर, जौनपुर तथा कन्नौज में पैदा होता था। अब उसमें कमी आने लगी है। सुना है अजमेर तथा पुष्कर में एक चैती गुलाब की किस्म पैदा की गई है जो सालभर फूलता है। हमारा चैती गुलाब तो केवल एक मास चैत में ही पुष्पित होता है। गुलाब-बाड़ी और चैती गायन का यह उत्सव किसने शुरू किया यह स्पष्ट नहीं है। आज भी वैष्णव मंदिरों में चैती गुलाब से ठाकुर जी का शृंगार होता है और वहाँ 'चैती' गायन भी होता है। दूसरी ओर विगत सदी जमींदारों, राजाओं की थी। सूबेदार मीर रूस्तम अली राग-रंग के बड़े रसिया थे और शायद उन्होंने ही यह उत्सव आरंभ किया। एक ओर यह भक्तिभाव से ओतप्रोत था तो दूसरी ओर यह सामंती वैभव का प्रतीक भी था। वैसे भी मुझे याद है, मेरे बचपन में बीसवीं सदी के दूसरे-तीसरे दशक में एक रुपये के हजार फूल मिलते थे और आज शायद एक रुपये के दो चार फूल मिलते हैं। संगीत परिषद् की गुलाब-बाड़ी में हमने एक रुपये के सौ फूल खरीदे थे, मगर अब मँहगाई ने मार दिया है। अब हम एक फूल सूंघ लेते हैं और दिल की तपिश बुझा लेते हैं। अब तो राजे-रजवाड़े, पुराने रईश-जमींदार गये (और नये रईशों के शगल कुछ और हैं)। अच्छी बात यह है कि दीवानखानों से निकलकर यह लोकोत्सव चैता-महोत्सव बन गया। सच पूछिये तो यह उत्सव वास्तव में आरम्भ होता है होली के समय ध्रुपद, धमार, होरी, फाग, दादरा गायन से। फिर पुराने साल के मंगल को विदा करके नये साल के मंगल का स्वागत होता है बुढ़वा मंगल उत्सव के रूप में। काशी, गंगा और बाबा

* Dr. Bhanu Shankar Mehta, B. 37/67, Birdopur, Varanasi-221010

विश्वनाथ रंगवर्षा में भींगे चैती गाने लगते हैं और नया साल (विक्रमी संवत्सर) चैती, चैता, घाटों आदि के सुरीले स्वरों से मदमस्त होकर गरमाने लगता है। यद्यपि संगीत परिषद् फरवरी के आरम्भ में बसंतोत्सव (शिशिर ऋतु) मनाता रहा है पर बसंतबहार तो चैत्र-वैशाख में ही मादकता लेकर आता है। चैती गायी जाती है—मगही और भोजपुरी में, साहित्यकारों के स्वर में, लोक गायक-गायिकाओं के विकल स्वरों में। आइये एक प्राचीन गुलाब-बाड़ी की झलक देखिये इस विवरण में—

"चतुर्दिक गुलाब की पंखुड़ियाँ बिखरी हैं, बैठने के लिए गुलाबी पंखुड़ियों का गलीचा बिछा है, निरन्तर गुलाब की पंखुड़ियों की वर्षा हो रही है, गुलाबी रौशनी है, गुलाबजल की फुहार बरस रही है, गुलाब के इत्र से गोशा-गोशा मुअत्तर है। श्वेत वस्त्रधारी श्रोता, रसिया बनारसी, मगही पान का चौघडा जमाये, आँख में बूटी का सुरूर लिए (और बूटी भी कसेरू, अनार, संतरे में छनी), दीन-दुनिया को भूल 'चैती' में डूबे हैं। यहाँ मंच नहीं है, सब मिलजुलकर बैठे हैं, सभी गा रहे हैं, गायिका मुखड़ा गाती है और प्रेमीजन टेक देते हैं। कोई ताल दे रहा है, कोई तान मार रहा है। मगर शालीनता पूरी है। सुना है पहले स्वयं काशीनरेश भी गुलाब-बाड़ी में शिरकत करते थे। मैंने ऐसी गुलाब-बाड़ी शायद बीसवीं सदी के छठे दशक में देखी थी-साक्षी विनायक स्थित बेनी रामपुरी के मठ में। उसके बाद कई प्रतिरूप उत्सव हुए पर असली गुलाब-बाड़ी कहीं खो गई।"

मुझे याद आ रही है काशिका के स्वनामधन्य साहित्यकार स्व. शिवप्रसाद मिश्र रुद्र काशिकेय, गुरु बनारसी जी और उनके इस पद की—

पूरब दिशा में गुरु देखऽ त बिहाने आज
कैसी अनोखी चोखी झलक गुलाबी हौ।
पानी हौ गुलाबी, जवानी हौ गुलाबी अउर
मुँह हौ गुलाबी, फलक गुलाबी हौ।।
गोरी कऽ सरीर धीर धरके निहारा तनी
सिर से उठाय नह तक गुलाबी हौ।
फलक गुलाबी, छलछलक गुलाबी अउर
अलक गुलाबी, सब खलक गुलाबी हौ।।

चैती बनारस के लोक गायन की प्रसिद्ध विधा है और अब तो वह शास्त्रीय भी बन चली है। चैती कई निर्गुण रूपों में गायी जाती है—चैता, घाटो, मगही, निरगुन आदि पर बनारसी चैती का अपना ही रंग है। चैती गायन का नाम लेते ही अनेक स्वनामधन्य कलाकारों के नाम याद आ जाते हैं जैसे—हुस्नाबाई, बड़े रामदास, मैना, विद्याधरी, सिद्धेश्वरी देवी आदि।

आप जानते हैं चैत्र वसन्त ऋतु का मास है, बड़ा उत्पाती समय है। यह अनंग का हुड़दंगी महीना है, पर साथ ही बड़ा आलसभरा, नींदभरा समय है, विरह में डूबा है। यदि आप चैती के बोल देखें तो बात समझ में आ जायेगी—

1. चैत की निंदिया जिया अलसाने हो रामा
2. एहि ठैंया मोतिया हेरानी हो रामा
3. आयल चैत मास उत्पाती पियरी न पहिनब
4. सुगना बोले मोरी अटरिया
5. सब बन अमवा फूले
6. नाहिं भूले रे तुमरी सुरतिया
7. सब रस चुवेलऽ नैनवा
8. सोवत निंदिया जगाय
9. सेज चढ़त डर लागे
10. मृगनैनी तोरी आँख क्या किसी को मारेगी (ठेठ बनारसी)
11. कौन मास फूलेला गुलबवा, कौन मास लागेलऽ टिकोरवा (प्रश्नोत्तरी)
12. फूलन लागे नवल गुलबवा (भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, साहित्यिक)
13. पिया मिलन हम जाइब हो (कबीर, निरगुन)
14. काहे कारन सैंया भइलन जोगिया भभूत रमाय
15. काहे फिरत बौरानी हो रामा
16. जुई कऽ फुलवा हथवा लगत कुम्हलाय

हमने कुछ नमूने पेश किये—शाम हो रही है, कोयल बोल रही है, पिया संझवे से सूतल है, फिर साँझ कजरारी है और रात विरह की पीड़ा दूनी कर जाती है। फिर सवेरा होता है, वैराग्य जगता है और आत्मा परमात्मा गुण गाती उन्हीं में डूब जाती है।

चैत की शाम में जी अलसा गया है, मन उदास है, चाँद भी आज पीला-पीला और पतला है। लोक संगीत मन की भावना को उदात्त बनाता है, नहीं तो लोकोत्सव कैसा। आप मगन होकर निर्द्वन्द भाव से चैती सुनें, गुलाबी सुगन्ध से उत्फुल्ल हों और हमारी गुलाबी शुभकामनायें स्वीकार करें।